www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
बुधवार 10 अप्रैल 2019

दैनिक जागरण
मनन ही मन का सर्वश्रेष्ठ व्यायाम है

बेलगाम होते नक्सली

छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा में नक्सली हमले में भाजपा विधायक भीमा मंडावी के साथ चार सुरक्षाकर्मियों की मौत नक्सलियों के फिर से सिर उठाने का संकेत होने के साथ ही इस बात का भी सूचक है कि उनका दमन किया जाना शेष है। दंतेवाड़ा की खौफनाक घटना यही रेखांकित कर रही है कि नक्सलियों का दुस्साहस कायम है और वे चुनाव प्रक्रिया के साथ कानून एवं व्यवस्था को भी चुनौती देने में समर्थ बने हुए हैं। यह सिलसिला अब थमना ही चाहिए। हालांकि छत्तीसगढ़ में नक्सलियों पर कुछ लगाम लगी है, लेकिन यह ठीक नहीं कि वे जब-तब हिंसक वारदात करने में समर्थ हो जाते हैं। चिंता की बात यह है कि उनके ज्यादातर हमले बारूदी सुरंगों के जरिये ही होते हैं। आखिर वे बारूदी सुरंगों का इतनी आसानी से इस्तेमाल करने में कैसे समर्थ हैं? एक सवाल यह भी है कि उन्हें आधुनिक हथियारों और विस्फोटक सामग्री की आपूर्ति कहां से हो रही है? इन सवालों के जवाब इसलिए तलाशे जाने चाहिए, क्योंकि इस राज्य में नक्सली रह-रह कर सिर उठाकर उन दावों को चुनौती देते हैं जिनके तहत यह कहा जाता है कि उनकी ताकत कम हो रही है। नक्सली किस तरह अभी भी एक बड़ा खतरा बने हुए हैं, इसका प्रमाण केवल यही नहीं है कि तमाम चौकसी के बाद भी वे जहां-तहां हमले करने में समर्थ हैं, बल्कि यह भी है कि उनके हमलों के भय से राज्य में लोकसभा चुनाव तीन चरणों में कराने पड़ रहे हैं। इसके पहले विधानसभा चुनाव दो चरणों में कराने पड़े थे। इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि चंद दिनों पहले नक्सलियों के हमले में बीएसएफ के चार जवान निशाना बने थे।

जब नक्सली संगठन चुनाव के बहिष्कार की धमकी देने के साथ हिंसक गतिविधियों को अंजाम देने में लगे हुए थे तब फिर कहीं अधिक सतर्कता बरती जानी चाहिए थी। जरूरी केवल यह नहीं है कि चौकसी में कमी के कारणों का पता लगाने के साथ उनका निवारण किया जाए, बल्कि यह भी है कि जिन नक्सलियों ने भाजपा विधायक के काफिले को निशाना बनाया उन्हें जितनी जल्दी संभव हो, ठिकाने लगाया जाए। इसी के साथ इसकी भी तह तक जाने की जरूरत है कि नक्सलियों ने नक्सल प्रभावित इलाके के इकलौते भाजपा विधायक को क्यों निशाना बनाया? नक्सलियों को यह संदेश देना बहुत जरूरी है कि अगर वे हिंसा का सहारा लेने से बाज नहीं आएंगे तो उन्हें किसी भी कीमत पर बख्शा नहीं जाएगा। नक्सली किसी नरमी के हकदार इसलिए नहीं, क्योंकि वे वसूली करने वाले गिरोह में तब्दील हो गए हैं और निर्धन तबके को बहकाकर अपना उल्लू सीधा करने में लगे हुए हैं। छत्तीसगढ़ की नई सरकार को यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि नक्सली पुलिस एवं सुरक्षा बलों की ओर से बनाए गए दबाव से मुक्त न होने पाएं। यह शुभ संकेत नहीं कि वे एक सप्ताह के अंदर दो बड़ी वारदात करने में सक्षम हो गए। यह जरूरी है कि केंद्र सरकार के साथ राज्य सरकार नक्सलियों से निपटने की नीति को और प्रभावी बनाने पर ध्यान दे। आंतरिक सुरक्षा के मामले में संकीर्ण राजनीति के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

हिमालय में कूड़ा

उत्तराखंड पर कुदरत भले ही मेहरबान हो, लेकिन इंसानी फितरत उसे सहेजने के बजाय पलीता लगा रही है। एक ओर प्रधानमंत्री पांच साल से स्वच्छता मिशन पर जोर दे रहे हैं। तमाम अभियान चलाकर लोगों को जागरूक भी किया जा रहा है। बावजूद इसके सैलानी पहाड़ों का लुत्फ उठाकर गंदगी छोड़ रहे हैं। सिस्टम भी इस ओर से आंखे बंद किए हुए है। रविवार को दून स्कूल से 32 छात्रों का दल ट्रैकिंग के लिए चमोली जिले के प्रसिद्ध पर्यटन स्थल औली पहुंचा। लेकिन वहां के हालात देखकर वे दंग रह गए। चारों ओर फैले कूड़े के ढेर देखकर छात्रों ने ट्रैकिंग का फैसला छोड़ दिया और सफाई में जुट गए। इससे उम्मीद की एक किरण तो दिखाई देती है कि आज चाहे जैसा हो, लेकिन भविष्य उज्ज्वल है। नई पीढ़ी की यह जागरूकता और संवेदनशीलता सिस्टम को भी आईना दिखाने वाली है। यह सवाल इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि औली जैसे प्रसिद्ध पर्यटक स्थल को लेकर भी जिम्मेदार विभाग गंभीर नहीं हैं। यहां पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए फूलों की घाटी की तरह सख्त कदम उठाने की दरकार है। बात सिर्फ औली की ही नहीं है, रुद्रप्रयाग, उत्तरकाशी, पिथौरागढ़ और बागेश्वर में रोमांच के शौकीन ट्रैकिंग पर तो जाते हैं, लेकिन कूड़े के ढेर वहीं छोड़कर लौट आते हैं। बात सिर्फ यहीं खत्म नहीं होती। नदियों की स्वच्छता को लेकर भी यही स्थिति है। औरों की तो छोड़िए, खुद सरकारी महकमे इस उद्देश्य पर पलीता लगा रहे हैं। ज्यादा वक्त नहीं बीता जब उत्तरकाशी में नगर पालिका ने जिस तरह रातों रात तीस ट्रक कूड़ा भागीरथी में उड़ेल डाला। यह हाल तब है जबकि हाईकोर्ट और नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल गंगा को लेकर पहले ही सख्ती दिखा चुके हैं। इससे पहले ऑलवेदर रोड कटिंग के दौरान भी पहाड़ से निकला मलबा भागीरथी में डाला जाता रहा। सवाल यह है कि ऐसा हो क्यों रहा है। दरअसल पर्यटन प्रदेश का सपना संजो रहे उत्तराखंड में जिम्मेदार एजेसियां इस तरफ गंभीरता से पहल करने को तत्पर नजर नहीं आ रहीं। निकायों के मामले में देखा जाए तो कूड़े का निस्तारण एक बड़ी चुनौती है। सरकार, शासन, प्रशासन मिलकर समस्या के समाधान को प्रयास करें।

सोशल मीडिया की अफवाहें

सृजनपाल सिंह

सभी सोशल मीडिया कंपनियों को अफवाह फैलाने वाले खातों को लेकर और अधिक पारदर्शिता बरतने की सख्त जरूरत है

2016 के अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव इस आर्थिक महाशक्ति के आधुनिक इतिहास में शायद सबसे अव्यवस्थित चुनाव थे। चुनाव के दौरान राष्ट्रपति पद के दोनों उम्मीदवारों पर एक-दूसरे के खिलाफ सोशल मीडिया पर गलत सूचनाएं फैलाने का आरोप लगा था, जिसकी गहन जांच भी हुई। तब अफवाहें यहां तक फैली थीं कि हिलेरी क्लिंटन द्वारा अमेरिका के प्रमुख पिज्जा स्टोरों में बच्चों को दासों के रूप में छिपाकर बाल तस्करी की जा रही है। बात यहीं नहीं रुकी, तमाम अमेरिकियों ने इस फर्जी सूचना पर विश्वास किया और पिज्जा स्टोरों पर हंगामा तक किया। उस चुनाव से यह जाहिर हो गया कि सोशल मीडिया किसी भी लोकतांत्रिक देश के चुनाव में एक अहम भूमिका निभाएगा। आज अमेरिका में लगभग दो तिहाई लोग सोशल मीडिया पर खबरें प्राप्त करते हैं जहां पर सच्चाई और अफवाहों के बीच की रेखा को चिन्हित करना मुश्किल होता है। यह प्रवृत्ति दुनिया में हर जगह बढ़ती जा रही है। भारत में भी जहां डाटा रेट दुनिया में सबसे कम है और सस्ते स्मार्टफोन विभिन्न भाषाओं में काम कर सकते हैं, एक सोशल मीडिया संचालित समाज बनता जा रहा है। वॉट्सएप और अन्य सूत्रों द्वारा साझा किए गए समाचारों पर लोगों का विश्वास काफी ज्यादा है, लेकिन इन समाचारों की पुष्टि के संसाधन कम हैं। 2016 के अमेरिकी चुनावों के बाद अमेरिकी सीनेट ने लगभग सभी सोशल मीडिया और सूचना-प्रौद्योगिकी कंपनियों के सीईओ को अपनी सफाई पेश करने के लिए बुलाया। इसमें फेसबुक के संस्थापक मार्क जुकरबर्ग और गूगल के सीईओ सुंदर पिचाई भी शामिल थे।

फेसबुक समूह इंस्टाग्राम और वॉट्सएप का भी मालिक है। अमेरिकी सीनेट की जांच से फेसबुक का शेयर कुछ ही दिनों में बीस प्रतिशत गिर गया, जो फेसबुक के लिए साढ़े आठ लाख करोड़ का नुकसान था। 2017 की सीनेट सुनवाई के बाद टेक्नालॉजी दिग्गजों ने चुनावों में सोशल मीडिया के इस्तेमाल पर नियंत्रण शुरू किया। अपने यहां हो रहे लोकसभा चुनाव के लिए फेसबुक और ट्विटर, दोनों ने ही राजनीतिक प्रचार के लिए नई नीतियां बनाई हैं। यहां यह कहना भी जरूरी है कि ये नीतियां अभी परीक्षण के दौर में ही हैं और उनके दूरगामी परिणामों का अनुमान लगाना अभी संभव नहीं है। बीते दिनों इन नीतियों का पहला परिणाम देखने को मिला जब फेसबुक ने अपने प्लेटफॉर्म से 700 पेज और खाते बंद कर दिए। इन खातों के जरिये राजनीतिक प्रेरित गलत सूचनाएं फैलाने का आरोप है। फेसबुक के साइबर सिक्योरिटी पॉलिसी हेड नरानिएल लिचेर ने बताया कि बंद किए गए खातों में 687 खाते कांग्रेस को समर्थन कर रहे थे, जबकि 15 खाते भाजपा को। इन दोनों प्रकार के खातों में 2014 से लगभग 80 लाख रुपये का विज्ञापन व्यय हुआ और लगभग 28 लाख लोग इन फेसबुक एकाउंट को फॉलो करते थे। 80 लाख रुपये फेसबुक के लिए ऊंट के मुंह में जीरे के बराबर हैं। फेसबुक ने 2018 में पूरे भारत में 521 करोड़ रुपये की आय विज्ञापनों द्वारा अर्जित की, जिसका एक महत्वपूर्ण हिस्सा राजनीतिक प्रेरित विज्ञापन थे। हालांकि यह भी ध्यान रहे कि फेसबुक सटीक राशि का खुलासा नहीं करता।

अवधेश राजपूत

राजनीतिक सूचनाओं के साथ अफवाह फैलाने के लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल पहले से ही होता आ रहा है। यह लगातार बढ़ता जा रहा है। यदि 700 पेजों पर एक साथ प्रतिबंध लगा जिससे 28 लाख लोग जुड़े हुए थे तो हमें सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर सूचनाओं की विश्वसनीयता पर सवाल उठाने की आवश्यकता है। अधिकांश चुटकुले, मीम्स, डेटा, चित्र और यहां तक कि खबरों पर हम आसानी से विश्वास कर लेते हैं और इसी कारण उन्हें आगे फॉरवर्ड कर देते हैं, लेकिन संभव है कि उनके पीछे एक कंपनी द्वारा संचालित एक मार्केटिंग अभियान हो, जिसके आप केवल एक उपभोक्ता भर हों।

आखिर यह किससे छिपा है कि तमाम ऐसे ट्विटर एकाउंट मौजूद हैं जो नाम से किसी एक व्यक्ति के लगते हैं, लेकिन उनको बढ़ावा देने के लिए उनके पीछे एक पूरी टीम, एक पूरी इंडस्ट्री लगी है। एक मुद्दा फेसबुक की पारदर्शिता का है। दिलचस्प बात यह है कि किसी एकाउंट को राजनीतिक घोषित करने या किसी पोस्ट को राजनीतिक सामग्री बताने का एकाधिकार फेसबुक ने अमेरिका स्थित अपनी टीम को दिया है। इसका अर्थ यह है कि सात समंदर पार स्थित ऑफिस में भारत जनित कंटेंट के राजनीतिक होने या नहीं होने की सच्चाई पर फैसला लिया जा रहा है। इस तरह के फैसले लेने की क्या प्रणाली है और फैसला लेने के खिलाफ अपील करने की क्या पद्धति है, इस पर फेसबुक ने चुप्पी ही साध रखी है।

आखिर यह क्यों नहीं संभव है कि यह जांच और उसके आधार पर होने वाली कार्रवाई भारतीय पद्धति को समझने वाले लोग करें? सच तो यह है कि फेसबुक और साथ ही सभी बड़े सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म भारत में सिर्फ एक ब्रांच ऑफिस चलाते हैं। इन कंपनियों के सभी नीतिगत फैसले अमेरिका में बैठे उनके अधिकारियों द्वारा लिए जाते हैं। ऐसे परिदृश्य में यह जानना आवश्यक है कि फेसबुक पेज के जरिये करोड़ों रुपये राजनीतिक विज्ञापनों में तो नहीं बहाए जा रहे हैं? महज 700 खाते जिनका कुल व्यय चार साल में 80 लाख रुपये था, हटा देने से ये बड़ा सवाल दरकिनार नहीं किया जा सकता। फेसबुक के साथ अन्य सभी सोशल मीडिया कंपनियों को इस प्रकार की राजनीतिक गलतफहमियों और अफवाहों को फैलाने वाले खातों के ऊपर और पारदर्शी कार्रवाई करने की दरकार है। 700 फेसबुक एकाउंट पर कार्रवाई एक छोटी सी शुरुआत है। यह कार्रवाई हमारी बड़ी चुनौती के ऊपर पर्दा नहीं बननी चाहिए।

सूचना प्रौद्योगिकी कंपनियां बहुत बड़ी हो चुकी हैं, लेकिन उनका तंत्र पारदर्शी नहीं है। एप्पल कंपनी की संपत्ति लगभग 75 लाख करोड़ रुपये की है, जबकि फेसबुक जो महज एक कंप्यूटर प्रोग्रामिंग है, 45 लाख करोड़ रुपये के बराबर है। यानी फेसबुक की संपत्ति लगभग पाकिस्तान और बांग्लादेश के संयुक्त जीडीपी के बराबर है। फेसबुक ने इतनी संपत्ति बनाने के लिए 36,000 कर्मचारियों का उपयोग किया है जबकि पाकिस्तान और बांग्लादेश को अपनी पूरी 36 करोड़ की आबादी से यह जीडीपी मिलता है। साफ है कि ऐसे में कोई भी सरकार या उसकी एजेंसियां इन कंपनियों के ऊपर अपना नियंत्रण नहीं कर सकतीं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि फेसबुक के उपभोक्ता जिनकी संख्या एक अरब के ऊपर है, फेसबुक से अधिक पारदर्शिता की मांग करें। यह मांग अन्य सोशल मीडिया कंपनियों से भी करनी चाहिए। इसी के साथ यह भी जरूरी है कि आम लोग राजनीतिक अफवाहों से निपटने के लिए सोशल मीडिया कंपनियों की ओर से उठाए गए कदमों की पूरी जानकारी हासिल करने के लिए एक साथ आवाज उठाएं और स्व-नियमन की मांग करें। इस मांग का पूरा होना आसान नहीं होगा, मगर यह तय है कि 2019 के आम चुनावों में सोशल मीडिया का उपयोग-दुरुपयोग वैश्विक लोकतांत्रिक संदर्भ में एक महत्वपूर्ण कड़ी अवश्य बनेगा।

(लेखक सूचना प्रौद्योगिकी मामलों के विशेषज्ञ और एपीजे अब्दुल कलाम सेंटर के सीइओ एवं सह-संस्थापक हैं)

response@jagran.com

मुफ्तखोरी की खतरनाक प्रवृत्ति

त्रिलोचन शास्त्री

लोक-लुभावन वादे करके राजनीतिक दल अर्थव्यवस्था के साथ ही लोकतंत्र को भी भारी नुकसान पहुंचा रहे हैं

मुफ्तखोरी की प्रवृत्ति किस तरह अप्रत्याशित रूप से बढ़ रही है, इसका एक प्रमाण यह है कि 2014 से अब तक 1.9 लाख करोड़ रुपये की कर्ज माफी की जा चुकी है। आम चुनाव से पहले केंद्र सरकार छोटे किसानों को सालाना 6,000 रुपये देने की योजना लेकर आई। इस योजना में सालाना 75,000 करोड़ रुपये खर्च होंगे। खाद्य, पेट्रोल और उर्वरक सब्सिडी की मद में 2.84 लाख करोड़ रुपये दिए ही जाते हैं। सत्ता में आने पर कांग्रेस भी प्रति गरीब परिवार लगभग 72,000 रुपये सालाना की न्यूनतम आय देने का वादा कर रही है। साफ है कि सभी राजनीतिक दल समाज की भलाई के नाम पर मुफ्तखोरी का सहारा लेकर एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। ऐसे में सवाल उठता है कि इतना सारा पैसा कहां से आएगा? या तो करों को बढ़ाया जाएगा या फिर सरकारी घाटे में और वृद्धि होगी। अनुमान है कि राजकोषीय घाटा लगभग 8.5 लाख करोड़ रुपये होगा, जो 6.24 लाख करोड़ रुपये के अनुमान से कहीं ज्यादा है। यह स्थिति तब है जब रिकॉर्ड जीएसटी संग्रह हुआ है। यदि हम सभी प्रकार की सब्सिडी जोड़ते हैं तो यह पिछले साल के 24.6 लाख करोड़ रुपये के वार्षिक राजस्व का लगभग 50 फीसद है। यह भी ध्यान रहे कि कई राज्य सरकारों के वित्तीय घाटे बदतर स्थिति में हैं। इस चर्चा में हमें एक महत्वपूर्ण मुद्दे को चिन्हित करने की आवश्यकता है। आम तौर पर गरीबों को दी जाने वाली सब्सिडी की ही बात होती है, लेकिन हमें उद्योगों और अमीर लोगों को दी जाने वाली सब्सिडी पर भी ध्यान देने की जरूरत है। यदि हम कर प्रोत्साहन की पुरानी परिभाषा की बात करें तो यह सब्सिडी पांच लाख करोड़ रुपये से अधिक हो जाती है।

हमारे यहां मुफ्तखोरी की प्रवृत्ति क्यों हैं? इस पर दो विरोधी विचार हैं। एक यह है कि बढ़ती असमानता, कुपोषण की स्थिति और खेती के संकट के साथ भारत एक गरीब देश है, इसलिए सब्सिडी की आवश्यकता पड़ती है। अन्य देशों में विशेष रूप से अमेरिका और यूरोप में कृषि सब्सिडी भारत की तुलना में बहुत अधिक है। ऐसे में सवाल उठता है कि यह व्यवस्था एक गरीब देश में क्यों न हो? दूसरा दृष्टिकोण यह है कि हम इसे वहन नहीं कर सकते हैं, हमारा वित्तीय घाटा बहुत अधिक है और सब्सिडी के जरिये हम समस्याओं का समाधान नहीं कर सकते। सब्सिडी लोगों को आलसी बनाती है और काम के प्रति लगन को खत्म करने का काम करती है। यह बहस कभी किसी निर्णायक नतीजे पर नहीं पहुंच सकती, क्योंकि भारत कैसा हो, इसे लेकर सबके अपने-अपने दृष्टिकोण हैं। इस सबके बावजूद विपरीत विचारधारा वाले राजनीतिक दल लोक-लुभावन वादे करने में एक-दूसरे से जमकर प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। क्या दक्षिणपंथी क्या वामपंथी

और क्या मध्यमार्गी, सत्ता की कुर्सी तक पहुंचने के लिए सभी को यह तरीका आसान लगने लगा है। इसके तहत पीडीएस यानी सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सस्ता राशन दिया जाता है, मुफ्त मोबाइल फोन, कुकिंग गैस कनेक्शन के साथ राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा कर्ज माफी के हथकंडे भी अपनाए जाते हैं। अब तो गरीब परिवारों के खातों में सीधे रुपये भेजा जा रहा है।

चुनाव के समय में मुफ्त की बंदरबांट का उपयोग नाटकीय रूप से बढ़ रहा है। दिखाया तो यह जाता है कि इसके पीछे जन कल्याण की मंशा है, लेकिन इसके पीछे वास्तविक मंशा सरकारी पैसों से वोट खरीदने की होती है। क्या यह उचित है? हमें सभी प्रासंगिक तथ्यों के साथ-साथ कुछ अंतरराष्ट्रीय उदाहरणों का उपयोग करके एक सार्वजनिक बहस करने की आवश्यकता है। भले ही हम एक आम सहमति तक न पहुंचें, लेकिन समाज को जागृत तो कर ही सकते हैं। हमें अपने आप से कुछ सवाल जरूर करने चाहिए। जैसे कौन से व्यय उचित हैं और कौन से नहीं? उदाहरण के लिए, सार्वजनिक धन का उपयोग करके तरह-तरह के गैजेट मुफ्त वितरित करना कहां उचित है?

हमने मुफ्तखोरी के प्रभाव का शायद ही कभी अध्ययन किया है। हमने कभी किसी राजनीतिक दल से यह नहीं पूछा कि वह कौन सा स्रोत है, जहां से लोक-लुभावन वादे पूरे किए जाएंगे? सरकार द्वारा उपयोग किया जाने वाला धन जनता का धन है और चुनावी उन्माद के दौरान हमें यह पता ही नहीं चल पाता कि धन कहां से आने वाला है? इस बीच सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में 12,50,000 करोड़ रुपये के एनपीए के साथ बैंकिंग प्रणाली दबाव में है। यह भी लोगों का पैसा है।

भारतीय चुनाव शायद दुनिया में सबसे अधिक प्रतिस्पर्धी हैं। लोकसभा में कम से कम एक सीट के साथ लगभग 34 राजनीतिक दल हैं। यह किसी भी अन्य देश की तुलना में अधिक है। ऐसे में यह स्वाभाविक है, इस तरह की प्रतियोगिता होगी और एक बड़ी आबादी (जो गरीबी रेखा से नीचे है) को लोक-लुभावन वादों से आकर्षित करने की कोशिश होगी। सुभाष चंद्र बोस ने कहा था कि तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा। आज हमारे नेता कहते हैं, तुम मुझे वोट दो, मैं तुम्हें मुफ्त में तमाम चीजें या सुविधाएं दूंगा। ध्यान रहे कि चुनाव के दौरान उम्मीदवार पैसे, शराब और विभिन्न किस्म के उपहार बांटते हैं।

सुप्रीम कोर्ट ने राजनीतिक दलों के लोक-लुभावन वादों का संज्ञान तो लिया, लेकिन साथ ही यह भी कहा कि यह नीतिगत मामला है और वह इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता। हमें किसी भी समाधान के लिए कुछ सिद्धांतों का पालन करने की आवश्यकता है। सबसे पहले तो किसी भी लोक-लुभावन घोषणा करने से पहले राजनीतिक दलों को यह बताना चाहिए कि पैसा कहां से आएगा? हमें पिछली लोक-लुभावन योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन भी करना चाहिए और इस क्रम में यह भी देखना चाहिए कि उन्होंने नीतिगत उद्देश्यों को प्राप्त किया या नहीं? यदि नहीं, तो यह स्पष्ट रूप से लोक-लुभावन वादे वोट पाने के लिए किए गए। हमें उन दिशानिर्देशों को विकसित करने की आवश्यकता है जो मुफ्तखोरी के तौर पर स्वीकार्य हैं। इनमें भुखमरी, कुपोषण, प्राथमिक शिक्षा, काम करने का अधिकार जैसी चीजें शामिल हैं, जिनसे बहुत लोग सहमत होंगे। मुफ्त मोबाइल फोन, लैपटॉप और टैबलेट दूसरी श्रेणी में आते हैं। अगर हम अपने पैसे का सही प्रबंधन नहीं करते और वोटों के लिए अंधाधुंध लोक-लुभावन वादे करते हैं तो हम केवल अपनी अर्थव्यवस्था को ही नुकसान नहीं पहुंचा रहे हैं, लोकतंत्र को भी नुकसान पहुंचा रहे हैं। मतदाता बेहतर प्रशासन की तलाश कर रहे हैं, लोक-लुभावन योजनाओं की नहीं।

(लेखक एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स के संस्थापक चेयरमैन हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

जीवन में द्वंद्व

मन से कुछ और जुबान से कुछ, सार्वजनिक जीवन में आदर्श और व्यक्तिगत जीवन में उसके विपरीत आचरण, व्यवहार में मृदुल, लेकिन अवसर मिलते ही किसी की गला-तराशी आदि तरीके को ही झूठ-फरेब कहा जाता है। ऐसा करने वाला सोचता है कि वह बहुत फायदे में है और बहुत जल्द उपलब्धियों के मुकाम पर पहुंच जाएगा, लेकिन उसे नहीं पता कि इस झूठ-फरेब की वह कितनी भारी और भयानक कीमत चुकाता है, क्योंकि शास्त्रों में उल्लिखित है जिस व्यक्ति की जुबान पर झूठ की सत्ता होती है तो उसकी जिह्वा पर रहने वाली देवी मां सरस्वती उसके घर से पलायन कर जाती हैं। फिर परिवार में ही कलह, द्वंद्व, कटुता, अमर्यादा का बोलबाला हो जाता है।

शास्त्रों के अनुसार एक झूठ से उस व्यक्ति के कई पुण्य क्षरित और नष्ट वैसे ही होते हैं। लोकजीवन में घर-घर में कुशल-मंगल के लिए लोग मनौतियां मानते हैं और परिवार के लोग उसे पूरा करने के लिए भगवान की शरण में जाते हैं तथा आध्यात्मिक अनुष्ठान करते हैं। इसके लिए प्रायः लोग अखंड रामचरित मानस पाठ, रुद्राभिषेक, चंडीपाठ, श्रीसत्यनारायण व्रतकथा आदि का सहारा लेते हैं। इन सारे अनुष्ठानों में सत्य और सदाचार के भाव होते हैं। किसी ग्रंथ में झूठ-फरेब बोलने के श्लोक, मंत्र, भजन नहीं होते। पूजा तो सदाचार और सत्य-आचरण की, लेकिन पूजा करने वाले के मन में जब अहर्निश असत्य, छल-कपट तो फिर भगवान 'एवमस्तु' और 'तथास्तु' कैसे कह देंगे? यह सामान्य दिमाग से सोचा जा सकता है।

मानस में श्रीराम आदर्श के प्रतीक हैं। पूजा श्रीराम की करें और आचरण रावण की तो 'बोया पेड़ बबूल का आम कहां से होय' मुहावरा चरितार्थ होगा। इसके अलावा झूठ-फरेब के बल पर मिली उपलब्धियों तथा मान-सम्मान की कलई खुलने का डर भी धीरे-धीरे मन में समाने लगता है, फिर एक झूठ को छुपाने के लिए अनेक झूठ बोलने पड़ते हैं। दिमाग पर जोर डालना पड़ता है कि कब किससे क्या कहा था? बस भय-मिश्रित यह स्थिति तनाव की जननी बन जाती है और यह जननी क्रोध, चिड़चिड़ापन, उलझन, अवसाद, गाली-गलौज तथा असहजता रूपी ढेरों कुपुत्रों की फौज खड़ी कर देती है और व्यक्ति किसी और से नहीं तो, बल्कि इन्हीं वैचारिक कुपुत्रों से परेशान हो जाता है।

सलिल पाण्डेय

एसिड हमला और लाचार व्यवस्था

देवेंद्रराज सुथार

देश में महिला सुरक्षा के तमाम दावों के बाद भी एसिड अटैक की घटनाएं रुकने के बजाय बढ़ती जा रही हैं

पिछले दिनों मथुरा में एक महिला सिपाही पर कार सवार युवकों ने एसिड फेंक दिया। अपराधी अविवाहित महिला सिपाही से शादी करना चाहता था, लेकिन परिवार इसको लेकर सहमत नहीं था। इसी आक्रोश में युवक ने अपने साथियों की मदद से इस खौफनाक घटना को अंजाम दिया। यह समझ से परे है कि कोई महज शादी नहीं होने की वजह से किसी लड़की के साथ इस तरह का दुर्व्यवहार कैसे कर सकता है? आखिर यह प्रेम करने का कौन सा तरीका है?

दरअसल महिलाओं पर अत्याचार की यह कोई पहली घटना नहीं है। देश में महिलाओं के प्रति आक्रोश दिखाने के लिए उन्हें तरह-तरह की शारीरिक यातनाएं देकर प्रताड़ित किया जाता रहा है। गौरतलब है कि भारत में हर साल करीब 500 लोगों पर एसिड हमला होता है, वहीं दुनियाभर में यह आंकड़ा 1500 है। इसमें महिलाओं की संख्या सबसे ज्यादा है। भारत में प्यार में असफलता, छेड़खानी, दहेज और जमीन विवाद में ऐसी घटनाएं सबसे अधिक होती हैं। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो की मानें तो उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, नागपुर और दिल्ली में ऐसी घटनाओं का ग्राफ सबसे ऊपर है। साल 2014 में केवल उत्तर प्रदेश में ही एसिड अटैक के 185 केस दर्ज किए गए। भारत के साथ ही पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान जैसे देशों में भी एसिड अटैक की घटनाएं बहुतायत में होती हैं।

निःसंदेह देश में महिला सुरक्षा के तमाम दावों के बाद भी एसिड अटैक की घटनाएं रुकने के बजाय बढ़ती जा रही हैं। सवाल है कि आखिर महिलाओं को सम्मान देने वाले हमारे समाज में ऐसी घटनाएं क्यों बढ़ती जा रही हैं? ऐसे हमलों के पीछे मानसिकता क्या है? और उन पर कैसे रोक लगाई जाए? प्रायः यह माना जाता है कि अपराधी समाज में अपनी दहशत कायम रखने के लिए इस तरह के जुर्म को अंजाम देते हैं। इन घटनाओं को अंजाम देने वाले अपराधी भावनात्मक रूप से बेहद कमजोर होते हैं। भावनात्मक रूप से कमजोरी बताती है कि ऐसे लोगों की समय पर काउंसलिंग होनी चाहिए।

एसिड अटैक के बढ़ते इन वारदतों को लेकर साल 2013 में शीर्ष अदालत ने केंद्र एवं राज्य सरकारों को फटकार लगाते हुए निर्देशित किया था कि एसिड अटैक पीड़ितों के पुनर्वास की समस्त जिम्मेदारी राज्य सरकारों की होगी। केंद्र सरकार ने भी इस तरह के अपराधों को जघन्य अपराध की श्रेणी में रखने का फैसला किया। ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए एसिड की बिक्री को नियंत्रित करने की व्यवस्था की गई। वहीं पीड़ित को कम से कम 3 लाख रुपये मुआवजा देने के साथ 18 साल से कम उम्र के बच्चों को एसिड नहीं बेचने जैसे नियम लागू किए गए। मेडिकल और शिक्षा के उद्देश्य से थोक में एसिड खरीदने से पहले एसडीएम से आदेश लेने तथा एसिड संबंधित निर्देशों का पालन नहीं करने पर पचास हजार का जुर्माना लगाने तक की व्यवस्था की गई। लेकिन इन सबके बाद भी देश में खुलेआम एसिड की बिक्री हो रही है। कानून के बावजूद अपराधी बेखौफ हैं। जाहिर है सरकारी तंत्र में खामी है। जिसमें सुधार की शीघ्र आवश्यकता है।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

लोक-लुभावन वायदों की विकृत राजनीति

ए सूर्यप्रकाश ने अपने आलेख 'भरोसा न जगाने वाली गुलाबी तस्वीर' में कांग्रेस के चुनावी घोषणापत्र में देश की आम जनता से किए गए वायदों की पड़ताल करते हुए, उसकी कथनी और करनी के अंतर को जिस प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत किया है, उससे सहमत हुआ जा सकता है। लेकिन यह स्थिति केवल कांग्रेस की ही नहीं है, अपितु लोक-लुभावन चुनावी वायदे करने में अब कोई भी राजनीतिक दल पीछे नहीं है। क्योंकि ये राजनीतिक दल इस बात को अच्छी तरह से समझते हैं कि इस देश की जनता को व्यक्तिगत रूप से आर्थिक लाभ पहुंचाने वाले चुनावी वायदों से अपनी ओर आकर्षित करना कितना आसान है। इससे पहले पांच विधानसभा चुनावों में कांग्रेस ने अपनी जीत के लिए ऐसा ही कर्ज माफी का चुनावी फंडा प्रस्तुत किया था। अब इस आम चुनाव में भी कांग्रेस उसी तरह के चुनावी फंडे से देश के अति गरीब परिवारों को सरकारी खजाने से 72 हजार रुपये सालाना देने का वायदा कर, उनका वोट अपने पाले में करना चाहती है। क्योंकि कांग्रेस इस बात को समझती है कि देश की अर्थव्यवस्था का गणित न समझ पाने वाले अति गरीब वर्ग के लिए मुफ्त में मिलने वाले 6 हजार रुपये महीने का लालच बहुत बड़ा है, जिसे पाने के लिए वे आंख बंद करके कांग्रेस को ही वोट देने में अपना हित मानेगी। कांग्रेस की इस चुनावी चाल के जवाब में भाजपा कहां पीछे रहती और उसने अपने चुनावी संकल्प पत्र में कांग्रेस की चुनावी चाल की काट करते हुए छोटे किसान और व्यापारियों के लिए पेंशन योजना और सीमांत किसानों के लिए एक निश्चित अवधि तक के लिए ब्याजमुक्त कर्ज देने की घोषणा कर दी। लेकिन चुनाव के समय आम जनता के वोट को अपनी झोली में डालने के लिए विभिन्न राजनीतिक दलों का इस तरह से देश की अर्थव्यवस्था के विपरीत चुनावी वायदे करना कितना उचित है? इस पर देश की न्यायपालिका और चुनाव आयोग को विचार जरूर करना चाहिए ताकि राजनीतिक दलों के खोखले और भ्रामक चुनावी वायदों पर लगाम लगाई जा सके।

pandeyvp1960@gmail.com

देशहित है सच्चा राष्ट्रवाद

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पिछले दिनों कहा कि राष्ट्रवाद केवल पाकिस्तान का विरोध करना भर नहीं होता। असली राष्ट्रवाद देश की प्रगति के लिए हर क्षेत्र में किया जा रहा प्रयास है। फिर चाहे वह चिकित्सा हो, स्वच्छता हो या किसान व जवान। हर तरफ का विकास ही राष्ट्रवाद है। कहने का तात्पर्य यह कि अगर आप देश को किसी भी प्रकार से नुकसान पहुंचाते हैं तो यह राष्ट्रवाद की श्रेणी में बिल्कुल नहीं आता। सच्चा राष्ट्रवादी वही है जो अपने देश को हर प्रकार से ऊंचाइयों तक ले जाने में योगदान दे। देश की एकता और अखंडता को बनाए रखने में मददगार हो। अगर देश को तोड़ने की साजिश या राष्ट्र विरोधी कोई अन्य कार्य में आप संलिप्त हैं तो फिर ये राष्ट्रवाद नहीं। इसलिए अगर आप राष्ट्रवादी बनना चाहते हैं देश के लिए कुछ करना चाहते हैं तो वही कार्य करें जिससे देश को लाभ हो।

नीरज कुमार पाठक, नोएडा

देश के लिए शुभ संकेत नहीं

नेशनल आर्मी ने भाजपा को वोट न देने पर हिंसा की धमकी दी है। देश में यह सब क्या हो रहा है? समझ में ही नहीं आता है। लोकतंत्र प्रलोभन, धमकी, डंडा एवं लूट तंत्र में तब्दील होता जा रहा है। मणिपुर का उग्रवादी समूह सरेआम धमकी देने से बाज नहीं आ रहा। महबूबा मुफ्ती अलग ही राग अलाप रही हैं। पार्टियां लोगों को प्रलोभन पर प्रलोभन दे रही हैं। अब हम कैसे कहें कि हमारे यहां लोकतंत्र की जड़ें मजबूत हैं। इन सब को देख-सुनकर ऐसा लगता है कि देश को कचरा घर में तब्दील करने की साजिश चल रही है। वोट एवं सत्ता की कमजोरी का सब देश की कीमत पर फायदा उठाना चाहते हैं। आज मणिपुर के उग्रवादी समूह ने धमकी दी है, धीरे-धीरे पूरे देश में इस प्रकार की अराजकता जड़ें जमा लेगी। जो शुभ संकेत नहीं है।

hemahariupadhyay@gmail.com

खैरात नहीं, काम दीजिए

आजकल सभी पार्टियां चुनाव जीतने के लिए जनता को मुफ्त की खैरात बांटने में लगी हैं। इस खैरात से न सिर्फ मेहनतकश करदाताओं का हौसला टूटता है, बल्कि मुफ्त में बैठकर खाने की उन्हें आदत भी पड़ती है। यह सभी के लिए हानिकारक है। देश में काम की कोई कमी नहीं है। कमी है तो सिर्फ नीयत और नीति की।

वेद मामूरपुर, नरेला

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।